पटना उच्च न्यायालय की अधिकारिता में

प्रथम अपील संख्या- 83/2010

==

1. शमशाद आलम, पिता- स्वर्गीय अबरार हुसैन, पता -मोहल्ला-कन्हौली जिसे रामबाग रोड के नाम से जाना जाता है, थाना.-मिठानपुरा, डाकघर-नगर मुज़फ़्फ़रपुर, जिला-मुज़फ़्फ़रपुर।
2. साकिब आलम, पिता- शमशाद आलम, पता- मोहल्ला-कान्हौली जिसे रामबाग रोड के नाम से जाना जाता है, थाना.-मिठानपुरा, डाकघर-नगर मुजफ्फरपुर, जिला-मुजफ्फरपुर।
3. शारिक आलम, पिता- शमशाद आलम, पता- मोहल्ला-कन्हौली जिसे रामबाग रोड के नाम से जाना जाता है, थाना.-मिठानपुरा, डाकघर-नगर मुज़फ़्फ़रपुर, जिला-मुज़फ़्फ़रपुर।

.... अपीलार्थी/अपीलार्थीगण

बनाम

बिहार राज्य .... उत्तरदातागण

==

उपस्थिति :

अपीलार्थी/ओं के लिए	:	श्री नागेंद्र राय, वरिष्ठ अधिवक्ता
		सुश्री ज्योत्सना रानी मिश्रा, अधिवक्ता
प्रतिवादी/ओं के लिए	:	श्री यू. एस. एस. सिंह (जी. पी.-19)

==

सिविल प्रक्रिया संहिता --- धारा 96, O.VIII R.3 --- भारतीय साक्ष्य अधिनियम --- धारा 58 --- एक शीर्षक मुकदमे में पारित निर्णय के खिलाफ पहली अपील जिसके तहत अपीलकर्ताओं / वादी के दावे को दावे वाली संपत्ति पर खारिज कर दिया गया था --- निष्कर्ष: अपीलकर्ताओं / वादी का मामला तीन पंजीकृत बिक्री कार्यों पर आधारित है और वादी ने 1949 से 2000 तक शीर्षकों की श्रृंखला की दलील दी --- यदि वादी द्वारा अपने वाद में की गई दलील को लिखित बयान में न तो अस्वीकार किया गया है और न ही विवादित किया

गया है, तो ऐसी दलील को स्वीकार किया जाना चाहिए --- वादी द्वारा प्रस्तुत बिक्री कार्यों की वास्तविकता की धारणा का खंडन करने के लिए प्रतिवादी द्वारा उनके लिखित बयान में कोई सबूत नहीं दिया गया था, इसलिए, ऐसी स्थिति में, ट्रायल कोर्ट के सामने उक्त कार्यों को सही और वास्तविक मानने के अलावा कोई विकल्प नहीं था --- दायित्व उस व्यक्ति पर होगा जिसने ऐसे पंजीकृत विलेख की वैधता पर प्रश्न उठाया है और वर्तमान मामले में प्रतिवादी दायित्व का निर्वहन करने में असफल रहा है--- राजस्व अभिलेखों में भूमि के संबंध में गलत प्रविष्टि से किसी का स्वामित्व समाप्त नहीं हो जाता है और न ही किसी के पक्ष में स्वामित्व बनता है और वादीगण की दलील के अनुसार, वाद भूमि के संबंध में प्रविष्टि के संबंध में सर्वेक्षण अभिलेख में कथित त्रुटि का पता पहली बार तब चला जब वादीगण ने अपनी खरीदी गई भूमि के संबंध में म्यूटेशन कराने का प्रयास किया और उसके बाद ही, उनके पक्ष में कार्रवाई का कारण उत्पन्न हुआ और उस समय से, सीमा अवधि शुरू मानी जा सकती है ---- सीमाओं में मामूली बदलाव को पंजीकृत विलेख पर अविश्वास करने का आधार नहीं बनाया जा सकता है --- विद्वान परीक्षण न्यायालय ने वादीगण के मामले पर अविश्वास करने में गंभीर त्रुटि की, जो वाद भूमि पर अपना स्वामित्व और कब्जा साबित करने में सफल रहे - अपील स्वीकृत --- निर्णय और डिक्री को रद्द किया गया। **(पैरा-12-15)**

1988 पीएलजेआर 96, 2012 (2) पीएलजेआर 190, 2013 (4) पीएलजेआर 363

.......पर भरोसा किया गया।

पटना उच्च न्यायालय का निर्णय आदेश

==

गणपूर्ति: माननीय न्यायमूर्ति श्री शैलेंद्र सिंह

मौखिक निर्णय

तारीखः 27-01-2025

वर्तमान प्रथम अपील विद्वान सब-जज (उप न्यायाधीश)-VII, मुज़फ़्फ़रपुर की विद्वान विचारण अदालत द्वारा स्वामित्व वाद संख्या- 27/2001 में पारित दिनांक 26.03.2010 के फैसले के खिलाफ दायर की गई है, जिसके द्वारा वादी के मुक़दमे को विरोध के बाद खारिज कर दिया गया था। सभी अपीलार्थी विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष वादी थे जबकि उत्तरदाता एकमात्र प्रतिवादी था। वादियों ने विवादित भूमि में अपना स्वामित्व घोषित करने की प्रार्थना के साथ अपना मुक़दमा दायर किया था। यहाँ, यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि प्रतिवादी विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष उपस्थित हुआ। लेकिन विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा कई अवसर दिए जाने के बावजूद लिखित कथन दायर करने में विफल रहा और अंत में, रु0 100/- (एक सौ रुपये) के भुगतान की शर्त पर लिखित कथन दायर करने का एक और अवसर की मंजूरी दी गई थी, लेकिन तब भी लागत जमा नहीं की गई थी, इसलिए विद्वान विचारण न्यायालय ने बाद के चरण में प्रतिवादी द्वारा दायर लिखित कथन को स्वीकार नहीं किया और चूंकि प्रतिवादी का कोई अभिवचन नहीं था, इसलिए विद्वान विचारण न्यायालय ने विवाधकों की विरचना नहीं की (मुद्दा नहीं बनाया)। इसके अलावा, प्रतिवादी ने वादी की दलीलों को गलत साबित करने या उनका खंडन करने के लिए कोई मौखिक या दस्तावेजी सबूत नहीं दिया और अंत में, दोनों पक्षों को सुना गया और विद्वान विचारण न्यायालय ने मुख्य रूप से निम्नलिखित तीन आधारों पर वादी के मुकदमे को खारिज कर दिया।

2. पहला आधार यह है कि वाद भूमि बिहार सरकार के नाम पर है और इस संबंध में पुनरीक्षण सर्वेक्षण खतियान (संक्षेप में 'R.S. खतियान') में एक प्रविष्टि है जो

1972 और 1981 के बीच की गई थी और कथित प्रविष्टि को वादी की दलीलों के अनुसार गलत कहा जाता है, लेकिन न तो अपीलकर्ताओं के विक्रेता और न ही अपीलकर्ताओं ने स्वयं पुनरीक्षण सर्वेक्षण खतियान में प्रविष्टि को ठीक करने का प्रयास किया और मुकदमा पुनरीक्षण सर्वेक्षण खतियान के पूरा होने और प्रकाशन के तीस साल बाद दायर किया गया था, जबकि इसे पुनरीक्षण सर्वेक्षण खतियान के प्रकाशन की तारीख के तीन साल के भीतर दायर किया जाना चाहिए था।

3. दूसरा आधार जिसे विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थियों के मुकदमे को खारिज करने में ध्यान में रखा गया था, वह यह है कि बिक्री विलेखों में सीमाओं के संबंध में भिन्नताएं हैं। प्रदर्श '1', '1/ए 'और' 4 ') जो अपीलार्थियों और उनके विक्रेताओं के पक्ष में स्वामित्व के हस्तांतरण से संबंधित हैं।

4. तीसरा आधार यह है कि वादी पर्याप्त सबूत पेश करके यह साबित करने में विफल रहे कि श्री कामेश्वर सिंह, तत्कालीन महाराजा धिराज, दरभंगा, जिन्हें विचाराधीन भूमि का मालिक कहा जाता था, के पास स्वामित्व का अधिकार था और उन्हें अपने मुख्य प्रबंधक के माध्यम से बेचने का अधिकार था। विद्वान विचारण न्यायालय के अनुसार, निर्धारण के लिए मुख्य प्रश्न यह था कि क्या वादीगण/अपीलर्थियों को दिनांक 09.09.2000 के बिक्री विलेख संख्या 19871 (प्रदर्श-'1') के माध्यम से एक वैध अधिकार प्राप्त हुआ और क्या विचाराधीन भूमि को वादी को उनके विक्रेताओं द्वारा वैध रूप से हस्तांतरित किया गया था, जिनके पास वाद भूमि में कानूनी अधिकार था और इसलिए, क्या वादीगण/अपीलकर्तागण विचाराधीन भूमि में अपने अधिकार की घोषणा की डिक्री प्राप्त करने के हकदार थे। उक्त प्रश्नों का उत्तर वादीगण के खिलाफ विचारण न्यायालय द्वारा दिया गया और परिणामस्वरूप, उनका मुकदमा खारिज कर दिया गया।

5. अपीलार्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री नागेंद्र राय ने तर्क दिया है कि वादी के दावे पर अविश्वास करते हुए प्रश्नगत निर्णय में विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा जो उपरोक्त आधार लिए गए है वे कानून की नजर में पूरी तरह से मान्य नहीं है। चूँकि यह एक स्वीकृत स्थिति है कि वादी के अभिवचन अप्रतिखंडित रहे क्योंकि प्रतिवादी द्वारा दायर लिखित कथन को विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा विचार में नहीं लिया गया था और इसके अलावा, प्रतिवादी द्वारा वादी के अभिवचनों के खिलाफ कोई सबूत पेश नहीं किया गया था और तदनुसार, प्रतिवादी द्वारा वादी के अभिवचनों का कोई खंडन नहीं किया गया था और यह विधि द्वारा अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांत है कि यदि वादी द्वारा अपने अभिवचन में लिए गए विशिष्ट अभिवचन के संबंध में प्रतिवादी द्वारा कोई विशिष्ट खंडन नहीं है तो इस तरह के अभिवचन को स्वीकृत माना जाना चाहिए। इस तर्क के समर्थन में, विद्वान अधिवक्ता ने **श्री दुर्गा औद्योगिक निगम बनाम भारतीय खनिज और धातु व्यापार निगम लिमिटेड** के मामले में पारित इस न्यायालय के फैसले को संदर्भित किया है जो **1998 PLJR 96** मे प्रकाशित है। और सुसंगत पैरा सं. 14, जिस पर निर्भरता दिखाई गई है, निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत की जा रही हैः

> *"14. अधिकारिता के प्रश्न का संक्षिप्त निर्णय इस आधार पर किया जा सकता है कि वादपत्र के पैराग्राफ 2 में वादी ने स्पष्ट रूप से कहा है कि विचाराधीन (Mica) अभ्रक, जिसे निर्यात किया जाना था। प्रतिवादी के साथ अनुबंध की शर्तों के अनुसार गिरिडीह से भेजा जाना था।इसमें आगे यह उल्लेख किया गया है कि प्रतिवादी लाभ के लिए गिरिडीह में अपना व्यवसाय भी करता है और वहाँ उसका कार्यालय भी है। वादी के पैराग्राफ 2 में दिए गए उपरोक्त बयानों को प्रतिवादी द्वारा अस्वीकार या विवादित नहीं किया गया है। वास्तव में लिखित कथन के पैराग्राफ 2 में प्रतिवादी वाद पत्र के*

पैराग्राफ 2 में दिए गए उपरोक्त बयानों को बिल्कुल भी खंडन नहीं किया है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि प्रतिवादी ने लिखित कथन में विशेष रूप से इनकार नहीं किया है, जहां तक कि वादपत्र में लगाए गए आरोपों का संबंध है कि वह गिरिडीह में लाभ के लिए व्यवसाय करता है, सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 8 नियम 3 और आदेश 8 के प्रावधानों के संदर्भ में निर्विवाद है। उपरोक्त प्रावधान के साथ भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 58 के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, वादपत्र में दिए गए कथन कि प्रतिवादी गिरिडीह में लाभ के लिए व्यवसाय करता है, स्वीकार किए जाते हैं।"

6. अपीलार्थियों के अधिवक्ता के अनुसार, इस न्यायालय द्वारा उपरोक्त सिद्धांत का पालन **एम. वेंकटरमण हेब्बर (डी) एल. आर. बनाम एम. राजगोपाल हेब्बार और अन्य** के मामले मे किया गया था जो **2007 (3) PLJR (SC) 81** में प्रकाशित है जिसमे प्रासंगिक पैराग्राफ संख्या **11 और 12** हैं।

7. यह आगे निवेदित किया जाता है कि बिक्री विलेखों में दी गई भूमि की सीमाओं में कोई भिन्नता नहीं है। (प्रदर्श '1', '1/ए' और '4'), यदि इन विलेखों में उल्लिखित सीमाओं को इन बिक्री विलेखों के निष्पादन और पहले विक्रेता की भूमि के प्रारंभिक क्षेत्र के बीच के अंतर को ध्यान में रखते हुए देखें तो इन बिक्री विलेखों में दो सीमाएं समान रूप से एक जैसी हैं। केवल दो सीमाओं के संबंध में भिन्नता है जो पहले बिक्री विलेख के कारण आती है। (प्रदर्श 1/ए) जिसमे '8' एकड़ और '9' दशमलव भूमि के संबंध में निष्पादित किया गया था, जो अन्य बाद के विलेखों की भूमि की तुलना में बहुत बड़ा क्षेत्र था और क्योंकि अपीलकर्ताओं के विक्रेता ने अपने विक्रेता से उक्त 8 एकड़ 99 दशमलव क्षेत्र में से केवल 2 कठठाभूमि हस्तांतरित कराई थी, इसलिए, पूर्वी और दक्षिणी भाग से संबंधित सीमाओं को

बिक्री विलेख में “जोनो” (ZoNo) के रूप में दिखाया गया था,जो एक उर्दू शब्द है और इसका अर्थ है "उसी भूखंड का हिस्सा। अपीलकर्ताओं (35-33) से संबंधित यह बिक्री विलेख वर्ष 2000 में निष्पादित किया गया था जिसमें उक्त सीमाओं के निकट दक्षिणी और पूर्वी तरफ, क्रमशः दो व्यक्तियों अशरफी लाल आर्य और स्वर्गीय लक्ष्मी नारायण की भूमि दिखाई गई, जिसे सीमा में भिन्नता का आधार नहीं माना जा सकता है क्योंकि पहले विक्रेता केदारनाथ मेहता द्वारा भूखंड के शेष हिस्से को हस्तांतरित करने की बहुत संभावना थी और आगे इन तीनों बिक्री विलेखों में पुराना खेसरा नंबर समान रहा, इसलिए इन बिक्री विलेखों में केवल दो सीमाओं में भिन्नता को, वादी के दावे के संबंध में पंजीकृत दस्तावेजों पर अविश्वास का आधार नहीं बनाया जा सकता। विद्वान अधिवक्ता निवेदित करते हैं कि ये सभी बिक्री विलेख पंजीकृत दस्तावेज हैं, इसलिए, इन विलेखों की प्रामाणिकता और शुद्धता को सत्यापित माना जाना चाहिए और इस संदर्भ में, इस न्यायालय द्वारा **सुरेश प्रसाद सिंह बनाम नथुनी अंसारी,** जो कि **2013 (3) PLJR पृष्ठ 341** पर प्रकाशित है, में की गई टिप्पणी महत्वपूर्ण है। जिन प्रासंगिक अनुच्छेदों पर अपीलार्थियों के अधिवक्ता द्वारा निर्भरता दिखाई गई है, उन्हें निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत किया जा रहा हैः

> *“**14.** वे निवेदित करते हैं कि पंजीकृत बिक्री विलेख सहित किसी भी पंजीकृत दस्तावेज की प्रामाणिकता के संबंध में कोई अनुमान नहीं हो सकता है और ऐसे दस्तावेज को भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 67 के अनुसार साबित करना होगा।एक बार जब प्रतिवादियों द्वारा प्रामाणिकता को चुनौती दी गई, तो निष्पादक के हस्ताक्षर के साथ-साथ बिक्री विलेख के अन्य तथ्यो को साबित करना वादी का कर्तव्य था।*

15. श्रीमान अधिवक्ता ने अपीलकर्ता की ओर से प्रस्तुत मुख्य तर्क पर विचार करते हुए निवेदित किया है कि किसी पंजीकृत दस्तावेज की प्रामाणिकता के संबंध में कोई अनुमान नहीं लगाया जा सकता। संदर्भ के रूप में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय प्रेम सिंह और अन्य बनाम बीरबल और अन्य अन्य के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के फैसले का संदर्भ दिया जा सकता है। (2006) 5 SCC. 353: [2006 (3) PLJR SC 179 में यह कहा गया कि यह एक उपधारणा है कि एक पंजीकृत दस्तावेज वैध रूप से निष्पादित किया है और प्रथम दृष्टया कानून में वैध होगा।उक्त निर्णय के पैराग्राफ 27 को त्वरित संदर्भ के लिए नीचे उद्धृत किया जा रहा हैः–

> *"27. यह एक उपधारणा है कि एक पंजीकृत दस्तावेज़ वैध रूप से निष्पादित किया गया है। इसलिए, एक पंजीकृत दस्तावेज, प्रथम दृष्टया कानून में मान्य होगा। इस प्रकार, ये साबित करने की जिम्मेदारी उस व्यक्ति पर होगी जो उपधरणा का खंडन करने के लिए सबूत प्रस्तुत करता है। वर्तमान मामले में, प्रतिवादी 1 उक्त उपधरणा का खंडन करने में सक्षम नहीं रहा है।*

8. यह भी तर्क दिया जाता है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने सीमा अवधि की गलत व्याख्या की है क्योंकि अपीलकर्ताओं ने वर्ष 2000 में पंजीकृत बिक्री विलेख के माध्यम से वाद भूमि में अपना अधिकार प्राप्त किया था और उन्होंने वर्ष 2001 में अपना मुकदमा दायर किया था और परिसीमा अधिनियम के अनुसार, एक घोषणात्मक डिक्री प्राप्त करने के लिए एक मुकदमे के लिए सीमा की अवधि तीन साल है और जहां तक वाद भूमि

के संबंध में RS (खतियान) में गलत प्रविष्टि का प्रश्न है, यह एक स्थापितविधि है कि अभिलेखों में की गयी प्रविष्टि न तो किसी के अधिकार या अधिकारों का निर्माण करती है और न ही उन्हें समाप्त करती है और इसके अलावा बिक्री विलेख के निष्पादन से पहले वादी के पास अधिकारों के अभिलेखों और उनके पुनरीक्षण सर्वेक्षण खतियान में कथित गलत प्रविष्टि की जानकारी प्राप्त करने का कोई कारण नहीं था।

9. दूसरी ओर, उत्तरवादी की ओर से पेश विद्वान अधिवक्ता श्री यू. एस. एस. सिंह ने तर्क दिया है कि विचारण न्यायालय के समक्ष, वादी/अपीलकर्ताओं ने केवल एक किराए की रसीद दायर की थी जो वर्ष 1981 में जारी की गई थी, लेकिन 1981 से पहले और बाद की अवधि से संबंधित कोई अन्य किराए की रसीद वादी द्वारा प्रस्तुत नहीं की गई थी। इसके अलावा वादी रजिस्टर-II में अपने विक्रेताओं के नाम दिखाने के लिए कोई सबूत पेश करने में विफल रहे और उनके द्वारा महाराजा धिराज दरभंगा, श्री कामेश्वर प्रसाद सिंह के तथाकथित अधिकार को दिखाने के लिए कोई सबूत नहीं दिया गया, जो उनके प्रबंधक के माध्यम से बाबू केदार मेहता के पक्ष में भूमि को बेचने के लिए 0 दिया गया हो, इसलिए, अपीलकर्ता बाबू केदार मेहता से अपने विक्रेता को वैध स्वामित्व के हस्तांतरण को साबित करने में विफल रहे, जिनके बारे में कहा जाता था कि उन्होंने दरभंगा महाराज से भूमि खरीदी थी।

10. दोनों पक्षों को सुना और प्रश्नगत निर्णय और डिक्री के साथ-साथ दोनों पक्षों के अभिवचनों और वादी/अपीलकर्ताओं द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों का अवलोकन किया।

11. निर्धारण के लिए जो मुख्य प्रश्न उत्पन्न हुए हैं वे हैंः.

(i) क्या वादीगण वाद भूमि में अपना अधिकार साबित करने के साथ-साथ उस पर अपना कब्जा साबित करने में सफल हुए?

(ii) क्या अपीलार्थियों का मुकदमा मुख्य रूप से सीमाअवधि के आधार पर खारिज होने के योग्य था?

12. अपीलार्थियों के मामले के अनुसार, मुक़दमे की संपत्ति तत्कालीन महाराजा दरभंगा, श्री कामेश्वर प्रसाद सिंह की थी, जिन्होंने अपने प्रबंधक के माध्यम से, एक पंजीकृत बिक्री विलेख दिनांक 23.11.1949 को निष्पादित करके इसे बाबू केदार मेहता नाम के व्यक्ति को बेच दिया और उसके बाद, उक्त बाबू केदार मेहता ने मुक़दमे की भूमि राम तीरथ प्रसाद नाम के व्यक्ति को दिनांक 19.02.1963 को पंजीकृत बिक्री विलेख के माध्यम से बेच दी और वादी ने दावा किया कि उन्होंने एक पंजीकृत बिक्री विलेख के माध्यम से उक्त राम तीरथ प्रसाद से मुक़दमे की भूमि खरीदी थी, जिसे 09.09.2000 को निष्पादित किया गया था। तदनुसार, अपीलार्थियों/वादियों का मामला तीन पंजीकृत बिक्री विलेखों पर आधारित है और वादियों ने 1949 से 2000 तक स्वामित्व की श्रृंखला प्रस्तुत की है। वादी ने इन बिक्री विलेखों को निचली अदालत के समक्ष प्रस्तुत किया जिन्हें प्रदर्श '1/ए', '4' और '1' के रूप में चिह्नित किया गया था जो पंजीकृत दस्तावेज हैं।पहला बिक्री विलेख मुकदमा दायर करने से 30 साल से अधिक समय पहले वर्ष 1949 में निष्पादित किया गया था, इसलिए, ऐसी स्थिति में, उक्त बिक्री विलेख की प्रामाणिकता की उपधारणा उत्पन्न होती है और इसका खंडन करने के लिए, प्रतिवादी/ उत्तरवादी द्वारा विचारण न्यायालय के समक्ष कोई सबूत नहीं दिया गया था और अन्य दो बिक्री विलेख, जिनके माध्यम से तथाकथित स्वामित्व राम तीरथ प्रसाद को और अंत में वादी को दिया गया था, भी पंजीकृत दस्तावेज हैं, इसलिए, ऐसी स्थिति में, विचारण न्यायालय के समक्ष उक्त विलेखों को सही और प्रामाणिक मानने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। जहां तक इस धारणा का खंडन करने की बात है, प्रतिवादी द्वारा और लिखित कथन में कोई सबूत नहीं दिया गया था, हालांकि इसे विचारण न्यायालय द्वारा विचार में नहीं लिया गया था, हालांकि यदि इसे ध्यान में रखा जाता है, तो भी, इन पंजीकृत दस्तावेजों का कोई विशिष्ट खंडन प्रतिवादी द्वारा नहीं किया

गया था, इसलिए, विद्वान विचारण न्यायालय ने इन पंजीकृत दस्तावेजों पर विश्वास नहीं करने में गलती की। यह विधि का एक स्थापित सिद्धांत है है कि यदि वादी के वादपत्र में की गई अभिवचन को लिखित कथन में न तो अस्वीकार किया जाता है और न ही विवादित किया जाता है, तो इस तरह की अभिवचन को आदेश VIII, नियम 3 और साक्ष्य अधिनियम के धारा 58 के संदर्भ में स्वीकार माना जाना चाहिए और इस संबंध में, इस न्यायालय के द्वारा निर्धारित सिद्धांत जो **श्री दुर्गा औद्योगिक निगम बनाम भारतीय खनिज और धातु व्यापार निगम लिमिटेड** (1988 PLJR 96 में प्रकाशित) के मामले में प्रतिपादित की गयी थी जो प्रासंगिक है। इसके अलावा, एक पंजीकृत बिक्री विलेख की कानूनी वैधता के संबंध में उपधारणा को खंडित करने की जिम्मेदारी उस व्यक्ति पर होगी जिसने ऐसे पंजीकृत विलेख की वैधता पर सवाल उठाया है और वर्तमान मामले में, प्रतिवादी जिम्मेदारी का निर्वहन करने में विफल रहा है और इस संबंध में, इस न्यायालय द्वारा निर्धारित सिद्धांत **2012 (2) PLJR 190** में प्रकाशित **सीता शरण प्रसाद बनाम मनोरमा देवी** का मामला प्रासंगिक है।

13. जहाँ तक सीमाअवधि के प्रश्न का संबंध है, विचारण न्यायालय ने वादी के मुकदमे को सीमाअवधि द्वारा वर्जित मानने की त्रुटि की है क्योंकि वादी के मामले के अनुसार, वाद भूमि में वादी के पक्ष का अधिकार 09.09.2000 से उत्पन्न हुआ, जब बिक्री विलेख को उनके विक्रेता द्वारा वाद भूमि के संबंध में उनके पक्ष में निष्पादित किया गया था। अतः, ऐसी स्थिति में, राजस्व अभिलेखों को सुधारने की सीमा अवधि या तो बिक्री विलेख के निष्पादन की तारीख से शुरू होगी या जब वाद भूमि में दाखिल खारिज के लिए वादी की प्रार्थना को राजस्व प्राधिकरण द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था उस तारीख से शुरू होगी या क्योंकि वादियों के पास वाद भूमि में स्वामित्व प्राप्त करने से पहले बिहार काश्तकारी अधिनियम की धारा 106 और 108 के तहत वादी के लिए वाद दायर करने का कोई कारण नहीं था। और, यह एक स्थापित विधि है कि राजस्व अभिलेखों में केवल एक प्रतिकूल प्रविष्टि वाद के कारण को जन्म नहीं देगी। मुकदमा करने का अधिकार तब प्राप्त

होता है जब किसी अधिकार का उल्लंघन हो या करने का स्पष्ट खतरा होता हो और इस संबंध में, इस न्यायालय द्वारा **बिहार राज्य और अन्य बनाम अलख सिंह और अन्य जो 2013 (4) PLJR 363** में रिपोर्ट किए गए मामले में की गई टिप्पणी प्रासंगिक हैं।

14. यह विधि की एक स्थापित स्थिति है कि राजस्व अभिलेखों में किसी भूमि के संबंध में केवल गलत प्रविष्टि से किसी के स्वामित्व को समाप्त नहीं किया जाता है और न ही किसी के पक्ष में अधिकार बनाया जाता है और वादी के अभिवचन के अनुसार, वाद भूमि के संबंध में प्रविष्टि के संबंध में सर्वेक्षण अभिलेख में कथित त्रुटि का पता तब चला जब वादी ने अपनी खरीदी हुई भूमि के संबंध में दाखिल खारिज करने का प्रयास किया और तभी वाद का कारण उनके पक्ष में उत्पन्न हुआ और उस समय से, सीमा अवधि शुरू मानी जा सकती है।

15. वादियों के दावे का विरोध करते हुए, प्रतिवादी ने मुख्य रूप से मुकदमे की भूमि के संबंध में प्रतिवादी के पक्ष में पुनरीक्षण सर्वेक्षण खतियान में की गई प्रविष्टि पर भरोसा किया, लेकिन प्रतिवादी द्वारा यह दिखाने के लिए कोई सबूत नहीं दिया गया कि बिहार राज्य को मुकदमे की भूमि में स्वामित्व और अधिकार कैसे मिला। तथा जहां तक बिक्री विलेखों में वाद भूमि की सीमाओं में भिन्नता के संबंध में विचारण न्यायालय की टिप्पणी का संबंध है, विचारण न्यायालय ने बिक्री विलेखों में उल्लिखित सीमाओं के विवरण को उचित तरीके से मूल्यांकन नहीं किया क्योंकि वादी के विक्रेता से संबंधित बिक्री विलेख वर्ष 1963 में निष्पादित किया गया था, जबकि वादी का बिक्री विलेख वर्ष 2000 में निष्पादित किया गया था और यदि दोनों बिक्री विलेखों में विचाराधीन भूमि की सीमाओं की तुलना की जाती है तो ऐसा प्रतीत होता है कि उत्तरी और पश्चिमी सीमाओ में कोई अंतर नहीं है। और दोनों समान हैं और जहाँ तक दक्षिणी और पूर्वी पक्षों की सीमाओं का संबंध है, उनके संबंध में भिन्नता 1963 और 2000 के बीच कई वर्षों के अंतराल के कारण हुई होगी,

जो संभव है क्योंकि वर्ष 1949 में निष्पादित पहला बिक्री विलेख 9 बीघा से संबंधित है, जिसमें से केवल कुछ हिस्सा वादी के विक्रेता को बेचा गया था और समय बीतने के साथ-साथ वर्ष 1949 के बिक्री विलेख में वर्णित भूमि के अन्य हिस्से की बिक्री की संभावना के कारण, सीमाओं में भिन्नता हुई होगी। इसके अलावा, सीमाओं में इस तरह के बदलाव को पंजीकृत विलेख पर अविश्वास करने का आधार नहीं बनाया जा सकता है। तदनुसार, इस न्यायालय का यह विचार है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने वादी के मामले में अविश्वास करने की गंभीर त्रुटि की है। वादी मुकदमे की भूमि पर अपना अधिकार और कब्जा साबित करने में सफल रहे। तदनुसार, उपर्युक्त दोनों प्रश्नों का निर्णय और उनका उत्तर अपीलार्थियों के पक्ष में दिया जाता है।

16. परिणामस्वरूप, प्रस्तुत अपील की अनुमति दी जाती है और प्रश्नगत निर्णय और डिक्री को निरस्त कर दिया जाता है और अपीलार्थियों के मुकदमे को एतद्द्वारा डिक्री (स्वीकृत) किया जाता है। लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं है।

(शैलेंद्र सिंह, न्यायमूर्ति)

अनु/-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता । समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।